E-ISSN: 2583-9667
Indexed Journal
Peer Reviewed Journal
https://multiresearchjournal.theviews.in

Received: 01-06-2023
Accepted: 06-07-2023

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCE RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY

Volume 1; Issue 1; 2023; Page No. 873-876

भारतीय शिक्षा इतिहास में महर्षि पतंजलि के विभिन्न–विभिन्न शिक्षा दर्शन की उपादेयता का संक्षिप्त मूल्यांकन

[1]मनोज कुमार सकलानी, [2]डॉ. विकेश कामरा

[1]शोधकर्ता, ग्लोकल स्कूल ऑफ एजुकेशन, द ग्लोकल यूनिवर्सिटी, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत
[2]प्रोफेसर, ग्लोकल स्कूल ऑफ एजुकेशन, द ग्लोकल यूनिवर्सिटी, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author: मनोज कुमार सकलानी

सारांश

दर्शन मनुष्य के चिन्तन की उच्चतम सीमा है। इसमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं मानव जीवन के वास्तविक स्वरूप, सृष्टि–सृष्टा, आत्मा–परमात्मा, जीव–जगत, ज्ञान–अज्ञान, ज्ञान प्राप्त करने के साधन और मनुष्य के करणीय तथा अकरणीय कर्मों का तार्किक अध्ययन किया जाता है। दर्शन आंग्ल भाषा के फिलासफी शब्द का रूपान्तर है जिसकी उत्पत्ति ग्रीक भाषा के दो शब्दो 'फिलोस' तथा 'सोफिया' से हुई है फिलोस का अर्थ है प्रेम तथा अनुराग और सोफिया का अर्थ है–ज्ञान। इस प्रकार फिलासफी या दर्शन का शाब्दिक अर्थ ज्ञान अनुराग अथवा ज्ञान का प्रेम है। संस्कृत में दर्शन शब्द 'दृश' धातु से बना है, जिसका अर्थ है 'देखना' 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' अर्थात् जिससे देखा जाये अर्थात् सत्य के दर्शन किये जायें, वह दर्शन हैं। प्लेटो के अनुसार पदार्थों के सनातन स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन है।

मूलशब्दः भारतीय शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, पाठ्य पुस्तक, सामाजिक प्रक्रिया, बेसिक शिक्षा परियोजना

प्रस्तावना

शताब्दियों के अनुभवों के आधार पर चीन में एक कहावत प्रचलित है कि "अगर आप एक वर्ष के लिए योजना बना रहे हैं तो धान रोपिए, दस वर्षीय योजना बना रहे हैं तो वृक्ष लगाइए, परन्तु अगर सौ वर्ष के लिये योजना बना रहे हैं तो लोगों को शिक्षित प्रशिक्षित कीजिये।" अंग्रेज भी भारत को सैकड़ों वर्षों तक गुलाम बनाए रखना चाहते थे, उनकी इस योजना की पूर्ति के लिये भारतीयों के राष्ट्रीय गौरव और आत्मविश्वास को भंग कर उन्हें हीन भावना से ग्रसित और काले अंग्रेजों के रूप में विकसित करना आवश्यक था। उन्होंने यह किया भी। भारत की अपनी स्वदेशी और स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षण व्यवस्था को समाप्त कर उस पर यूरोपीय पद्धति की शिक्षा थोपी। आजादी के पश्चात् के हमारे शासक अगर भारत को आत्मविश्वास और आत्मगौरव से सम्पन्न एक राष्ट्र के रूप में विकसित करना चाहते तो यूरोपीय शिक्षा पद्धति के स्थान पर भारत की अपनी परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा पद्धति की पुनर्स्थापना करनी चाहिये थी। संक्रमणकालीन भारत को हीन तथा हताशा से युक्त कराने के लिए भी विदेशियों द्वारा जबरन थोपी गई शिक्षा प्रणाली से मुक्ति आवश्यक थी, परन्तु सरकार ने उसी जबरन थोपी गई और राष्ट्रीय मानस के अनुपयुक्त शिक्षा पद्धति को भी निरन्तर जारी रखने का निर्णय लिया।

यद्यपि आजादी मिलने के बाद सरकार ने इस शिक्षा पद्धति में सुधार करने के लिए अनेकानेक प्रयत्न भी किये। सरकार द्वारा समय–समय पर अनेक आयोग और समितियाँ बनाई गई। जिन्होंने शिक्षा में सुधार करने हेतु अनेक सुझाव दिये। सरकार ने उन सुझावों में से कुछ पर अमल भी किया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति भी बनाई गयी, लेकिन वही ढाक के तीन पात, शिक्षा में कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं हो पाया है और आज हमारी शिक्षा व्यवस्था मात्र कमियों से ही नहीं वरन् गम्भीर विकृतियों से ग्रसित है। इसके माध्यम से एक संवेदनशील आदर्शों से प्रेरित और सामाजिक दायित्वों के प्रति जागरूक पीढ़ी के निर्माण के स्थान पर संस्कृति विहीन, स्वार्थ प्रेरित तथा प्रेम, सहयोग, सहकार आदि गुणों से विहीन पीढ़ी का निर्माण हो रहा है।

महर्षि पतंजलि की विचारधारा में धर्म तथा नैतिकता को भी अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हमारे देश के धर्म निरपेक्ष देश को पतंजलि के विचारों से सर्वाधिक प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए क्योंकि इनकी धर्म व नैतिकता की परिभाषा विश्व मानवता को अपने में समाहित करती है। उसमें संकीर्णता का लेशमात्र भी नहीं है। महर्षि पतंजलि ने धर्म का अर्थ चरित्र निर्माण, सदाचरण और कार्यों के सुसंस्कार से लिया और मानव सेवा को ही प्रमुख धर्म माना। इसके अनुसार धार्मिक शिक्षा के दो पक्ष हैं। प्रथम चरित्र एवं आचरण का परिष्कार जो सत्यानुराग के लिए अति आवश्यक है और द्वितीय ज्ञानेन्द्रियों का विकास और संस्कार जिसके अनुभवों से सुखानुभूति हो।

शिक्षा देश के भविष्य की नीव है और उसे मजबूत करने में पिछले पचास वर्षों में कोताही हुई है। शिक्षा में सुधार करने का

कार्य इतना बड़ा था कि उसको राष्ट्रीय चुनौती के रूप में स्वीकार नहीं किया गया और उसे जितनी प्राथमिकता मिलनी चाहिये थी, उतनी नहीं मिली। अभी तक हम उस मोह जाल से पूर्णतः नहीं निकल पाए हैं जो लार्ड मैकाले ने एक शताब्दी पूर्व हम पर फेंका था। शिक्षा के क्षेत्र में आज जैसी अराजकता और दिशाहीनता व्याप्त है, वैसी शायद पहले कभी नहीं थी। युद्ध, हिंसा, मूल्यहीनता और भौतिकवादी आँधी से त्रस्त मानवता को उसके विपन्न वर्तमान और अंधकारमय भविष्य में मार्ग निर्देशन के लिए महर्षि पतंजलि का प्रबुद्ध और व्यवहारिक शिक्षा दर्शन आशादीप बन सकता है। इनका शिक्षा दर्शन वर्तमान शिक्षा के दोषों का निवारण करके आदर्श शिक्षा प्रणाली की संरचना में सार्थक योगदान दे सकता है। इनके शैक्षिक विचार आज भी प्रासंगिक हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इनके विचारों और प्रयोगों को समझा जाये और उन पर अमल किया जाये।

दार्शनिक पृष्ठभूमि

महर्षि पतंजलि योग दर्शन के रचियता थे। यह प्रेरणा उन्हें अपने गुरू पाणिनी से प्राप्त हुई। पाणिनी एक महान दार्शनिक व वेदों, उपनिषदों व पुराणों के ज्ञाता थे। उनके गुरू महर्षि कपिल थे जिन्होंने सांख्य दर्शन रचा। पाणिनी के जीवन पर उनके गुरू भगवान कपिल की अमिट छाप थी। महर्षि पतंजलि को भी अपने गुरू से दार्शनिक चिन्तनधारा विरासत में प्राप्त हुई। पाणिनी अपने समय के प्रकाण्ड विद्वान थे और ऐसे गुरू के सान्निधय में रहकर महर्षि पतंजलि भी अलौकिक प्रतिभा के धनी हो गये थे। महर्षि पतंजलि ने अपने गुरू पाणिनी की रचना अष्टाध्यायी पर महाभाष्य लिख दिया। महर्षि पतंजलि जीवन के भौतिक व आध्यात्मिक दोनों पक्षों का विकास करना चाहते थे। वह चित्त को एक स्थान पर केन्द्रित करने के लिये योग को महत्वपूर्ण बताते हैं, क्योंकि योग के द्वारा मनुष्य जन्म–मरण के बंधनों से छूट सकता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये आठ उपाय बताये हैं–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, और समाधि। महर्षि पतंजलि ने योग का अन्त ध्यान व समाधि बतलाया है। जब मनुष्य समाधि की अवस्था तक पहुँचता है तो वह संसार से सम्बन्ध तोड़ लेता है। ईश्वर ही चिन्तन का लक्ष्य है वही उद्देश्य प्राप्ति में हमारी सहायता करता है।

धार्मिक पृष्ठभूमि

महर्षि पतंजलि के समय में भारतवर्ष धार्मिक अन्धता, कर्मकाण्डों व कुरीतियों से ग्रस्त था। धर्म के विश्वस्त व्याख्याता के रूप में जाने वाला उच्च वर्ग अपनी स्वार्थपरता के वशीभूत होकर धर्म एवं ईश्वरादेश के आधार पर नृशंस और कुरीतिपूर्ण सामाजिक आड़म्बरों को प्रोत्साहित कर रहा था। ब्राह्मणों ने अपना अत्याचारी रूप धारण कर लिया था तथा धर्म के नाम पर बलियाँ दी जाने लगी थी।

महर्षि पतंजलि के काल में ब्राह्मण धर्म स्थूल रूप में था तथा उपनिषदों का ज्ञानवाद उसका सूक्ष्म रूप था। इस युग में वैदिक कर्मकाण्डों और अनुष्ठानों की प्रधानता थी किन्तु ब्राह्मण धर्म के बौद्धिक व आध्यात्मिक पक्ष से भी लोग प्रभावित थे। कुछ ऐसे ब्राह्मण भी थे जिनके जीवन में इन कर्मकाण्डों का कोई स्थान नहीं था वे अपना सारा समय चिन्तन, मनन, तप और ध्यान में लगाकर जीवन को शुद्ध बनाते थे। उन्हें सांसारिक वस्तुओं से कोई लगाव नहीं था। वे अपना सारा समय ज्ञान की प्राप्ति तथा ज्ञान प्रदान करने में व्यतीत करते थे। यह ठीक है कि समाज के बहु–प्रतिष्ठित कुलीन वर्ग वेदों व धर्म में विश्वास करते थे व कर्मकाण्डों, आडम्बरों में अधिक विश्वास करते थे परन्तु समाज में कई ऐसे विचारशील पुरूष थे जो इन आडम्बरों को हेय दृष्टि से देखते थे। महर्षि पतंजलि भी उन विचारशील पुरूषों में से एक थे। उनके जीवन पर उनकी माता के धार्मिक विचारों का प्रभाव था। और उससे भी अधिक अपने गुरू पाणिनी की धार्मिक विचारधारा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

किसी भी देश की संस्कृति का उसके नागरिकों पर पूर्ण प्रभाव होता है। भारतीय संस्कृति की नीव प्राचीन काल से ही धर्म पर आधारित है। भारतीय संस्कृति के अनुसार धर्म ही मनुष्य को पशुओं से अलग करता है।

भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र शुरू से ही "आत्मानं विजानाति" (अपने आपको जानो) रहा है। भारतीय संस्कृति के निर्माता ऋषि और मुनि इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मनुष्य अपने आपको जाने, क्योंकि संसार के सत्य को जानने का केवल यही एक उपाय है। भारतीय संस्कृति बर्हिमुखी होने की अपेक्षा अर्न्तमुखी अधिक है। इसमें भौतिकता की तुलना में आध्यात्मिकता पर अधिक जोर दिया गया है। इन्हीं सब बातों से हमारी संस्कृति प्रभावित है जो मनुष्य पर पूरा प्रभाव डालती है।

इसी संस्कृति की प्रेरणा महर्षि पतंजलि को अपने समय के आध्यात्मिक विचारों से प्राप्त हुई। उनका दर्शन भी भारतीय संस्कृति से प्रभावित है और लौकिकता के साथ–साथ आध्यात्मिकता की भावना से ओतप्रोत हैं। भारतीय संस्कृति में दर्शन को बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति के पोषक हमारे ऋषि–मुनि ही हैं। उन्होंने ही अपने वेदों, दर्शनों, उपनिषदों, पुराणों तथा महाकाव्यों में इस संस्कृति को सुरक्षित रखा है जिसका प्रभाव आगे आने वाले प्रत्येक मानव को प्राप्त है। इन सब ग्रन्थों का प्रभाव ही महर्षि पतंजलि के जीवन पर भी पड़ा। उन्होंने भी हमारी संस्कृति को सुरक्षित करने के लिये अपने तीन प्रमुख ग्रन्थों की रचना की। महाभाष्य में उन्होंने अपने समय की तत्कालीन घटनाओं व संस्कृति का उल्लेख किया।

सामाजिक पृष्ठभूमि

वैदिक काल से मध्य काल तक आते–आते भारत की सामाजिक स्थिति में बहुत बदलाव आ गया था। भारत की सामाजिक स्थिति निरन्तर पतन की ओर जा रही थी। समाज जातियों में विभक्त था। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों को हीन दृष्टि से देखते थे। ब्राह्मणों को समाज में सबसे उच्च स्थान प्राप्त था। सम्पूर्ण शिक्षा–दीक्षा का भार भी ब्राह्मणों पर ही था परन्तु धीरे–धीरे ब्राह्मणों ने अपना अत्याचारी रूप धारण कर लिया था। ब्राह्मण अपने अधिकारों का अनुचित प्रयोग करने लगे थे। वह दूसरी जातियों व धर्मों के प्रति घृणा की भावना रखने लगे थे।

योग दर्शन में उन्होंने सबसे बड़ा धर्म ईश्वर की प्राप्ति माना है। योग कोई धर्म विशेष के लिये नहीं है बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति को सुखी बनाने के लिये है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति चाहे व किसी भी जाति व धर्म से सम्बन्धित हो योग से निरोग हो सकता है। महर्षि पतंजलि ने मानव जाति के कल्याण के लिये 'चरक संहिता' की भी रचना की। यह एक ऐसा ग्रन्थ है जो आयुर्वेद के द्वारा मनुष्य का कल्याण करे। राजा भोज ने तो उन्हें मन के चिकित्सक के साथ–साथ तन का चिकित्सक भी कहा है।

महर्षि पतंजलि की दार्शनिक विचारधारा

महर्षि पतंजलि एक सच्चे दार्शनिक ही नहीं थे बल्कि दर्शन के निर्माता भी थे। उनका अपना अलग एक दर्शन था 'योग दर्शन'। योग दर्शन के द्वारा उन्होंने अपनी दार्शनिक विचारधारा को जन–जन तक पहुँचाया। उन्होंने जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक मूल्यों व सत्यों को प्राप्त करना बतलाया है। ये आध्यात्मिक मूल्य हैं–सत्यं, शिवं एवं सुन्दरम्। महर्षि पतंजलि ने ये मूल्य सदैव

अमर बतलाये हैं। और यह मूल्य हमें योग के द्वारा प्राप्त होते हैं। योग की अन्तिम अवस्था व्यक्ति को परमतत्व से मिला देती है। व्यक्ति को योग के द्वारा ही आत्मानुभूति होती है। वह स्वयं को भली प्रकार से जानने लगता है और आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त कर लेता है।

महर्षि पतंजलि की दार्शनिक विचारधारा के तीनों तत्व अग्रलिखित हैं–

तत्व मीमांसा

तत्व मीमांसा को ग्रीक भाषा में 'मेटा फिजिक्स' कहते हैं। जिसका शाब्दिक अर्थ है मेटा अर्थात् परे तथा फिजिक्स अर्थात् स्वभाव या प्रकृति।

तत्व मीमांसा दर्शन की वह शाखा है जिसका लक्ष्य 'यथार्थ' की प्रकृति को स्पष्ट करना है। इसके माध्यम से जगत तथा व्यक्ति के 'अस्तित्व' के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

महर्षि पतंजलि ने तात्विक मीमांसा में आध्यात्मिक पक्ष एवं भौतिक पक्ष अंगीकृत किया है। उनके अनुसार शिक्षा मोक्ष एवं पूर्णता की प्राप्ति का साधन है। महर्षि पतंजलि ने शिक्षा के अन्दर व्यक्ति के विकास को सर्वोपरि माना है। शिक्षा ही व्यक्तित्व का, शरीर का तथा मानसिक शक्तियों का विकास करती है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य आत्म–सन्तोष एवं आत्म–नियंत्रण भी है क्योंकि व्यक्ति को शिक्षा ही अनुशासन की भावना सिखाती है जिसके द्वारा ये दोनों भावनाएं विकसित होती हैं।

महर्षि पतंजलि ने संसार को दुखों का घर बताया है। इन दुखों से मुक्ति का मार्ग योग शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। योग शिक्षा व्यक्ति का आध्यात्मिक, शारीरिक, बौद्धिक तथा मानसिक विकास करती है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार एक शिक्षक को ऐसी शिक्षा प्रदान करनी चाहिये जो बालक का चहुँमुखी विकास करने में सहायक हो।

ज्ञान मीमांसा

अंग्रेजी का 'एपिस्टोमालाजी' शब्द ग्रीक भाषा के एपिस्टीम से बना है जिसका अर्थ है 'ज्ञान' प्राप्त करना अथवा जानना। दर्शनशास्त्र की इस शाखा में ज्ञान की उत्पत्ति, उसकी संरचना एवं प्रकृति, विधि, वैधता तथा सीमाओं के सम्बन्ध में परिचय प्राप्त होता है। सत्य क्या है जिन विधियों के द्वारा यह ज्ञान प्राप्त करना सम्भव है, उस पर प्रकाश डालना ज्ञान मीमांसा का मुख्य प्रयोज्य है।

ज्ञान मीमांसा के अन्तर्गत ज्ञान प्राप्त करने की अधोलिखित चार विधियाँ हैं–

1. **तर्कसंगत उपागम–** इस उपागम के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने का सर्वोत्तम उपाय विशुद्ध तर्क की पद्धति को माना जाता है। इस विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान, शुद्ध एवं सत्य माना जाता है।
2. **इन्द्रियानुभवपरक उपागम–** इस उपागम में पाँचों इन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने पर बल दिया जाता है।
3. **प्रेरणात्मक उपागम–** इस उपागम में ज्ञान प्राप्त करने हेतु अन्तर्बोध, प्रेरणा तथा सत्य की सहज अनुभूति को विशेष महत्व दिया गया है। सिद्ध पुरूषों द्वारा प्रदत्त ज्ञान इसी श्रेणी में आता है।
4. **सत्तावादी उपागम–** ज्ञान प्राप्त करने के इस उपागम में महत्वपूर्ण मान्यता यह है कि वास्तविक या यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति ऐसी सत्ता के माध्यम से होती है जिसकी वैधता एवं विशुद्धता को चुनौती न दी जा सके। धर्म, सरकार तथा विशेषज्ञों द्वारा प्राप्त ज्ञान को इसी कोटि में रखा जा सकता है।

महर्षि पतंजलि ने अनुसन्धान विधि को भी श्रेष्ठ बताया है जिसके द्वारा बालक स्वयं नई–नई खोज करके सीखे, इस प्रकार का ज्ञान स्थायी होता है। पतंजलि ने प्रश्नोत्तर विधि, व्याख्यान विधि, सम्वाद विधि तथा श्रवण विधियों को भी बालकों के लिये श्रेष्ठ माना है। इन विधियों के द्वारा बालक शीघ्रता से ज्ञान ग्रहण करके अपने जीवन के लिये उपयोगी बना सकता है।

मूल्य मीमांसा

मूल्य मीमांसा से तात्पर्य दर्शन की उस शाखा से है जिसमें मूल्यों व आचरण सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या होती है। इसके माध्यम से अच्छे या बुरे व्यवहार की परख करने के लिये मानक सिद्धान्तों पर विचार किया जाता है जिससे मूल्यों के आधारभूत स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। अंग्रेजी भाषा के 'एक्सिआलाजी' शब्द ग्रीक भाषा के 'एक्सिअस' से निकला है जिसका अर्थ है मूल्य या अर्हता।

महर्षि पतंजलि के मूल्य मीमांसा के अन्तर्गत आत्मानुभूति, ईश्वर प्राप्ति अथवा मोक्ष सभी को एक ही अर्थ में लिया जाता है। उनकी दृष्टि इस आत्मतत्व की अनुभूति ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग अथवा किसी के द्वारा भी की जा सकती है।

महर्षि पतंजलि ने मूल्य मीमांसा के अन्तर्गत ऐसी शिक्षा को स्थान दिया है जिसके उद्देश्य तथा मूल्य समाज के मूल्यों तथा उद्देश्यों के अनुसार हो अन्यथा शिक्षा व समाज में तालमेल नहीं होगा और शिक्षा का पूरा तन्त्र निरर्थक हो जायेगा। स्वस्थ शिक्षा प्रणाली वह होती है जिसके अन्तर्गत पढ़ाये जाने वाली पाठ्य सामग्री तथा विषय तथा उनकी दिशा एवं सामर्थ्य समाज की आवश्यकताओं व आकांक्षाओं के प्रति न केवल संवेदनशील हो बल्कि मूल्यों व लक्ष्यों के अनुकूल ढलने की क्षमता भी रखते हो।

महर्षि पतंजलि ने पाठ्यक्रम को तीन बिन्दुओं के आधार पर महत्व दिया है भौतिक शरीर की रचना हेतु, भाषिक सुरक्षा हेतु तथा आत्मिक सुरक्षा हेतु।

महर्षि पतंजलि ने शिक्षा के सामाजिक व आध्यात्मिक महत्व को स्वीकारा है। योग के अनुसार शिक्षा एक सामाजिक अनिवार्यता है। इसकी पूर्ति हेतु कठोर अनुशासन की आवश्यकता है। योग पाठ्यक्रम में हमें ऐसे बिन्दु देखने को मिलते हैं, जो मनुष्य को विभिन्न अवस्थाओं के माध्यम से विभिन्न प्रकार के व्यावहारिक एवं सामाजिक मूल्यों को विकसित करते हैं तथा व्यक्ति को आत्म–नियंत्रण हेतु प्रशिक्षित करते हैं। और व्यक्ति अपने सामाजिक मूल्यों को संरक्षित करता है। मानव द्वारा आध्यात्म की उत्कृष्ट कोटि की प्राप्ति योग के पाठ्यक्रम का मूल उद्देश्य हैं।

निष्कर्ष

योग दर्शन के पाठ्यक्रम से बालक के शारीरिक विकास की प्राप्ति होती है। अतः इस प्रकार योग दर्शन के पाठ्यक्रम का मूल उद्देश्य चरम सत्य की प्राप्ति करना है। यही मूल्य मीमांसा का सार तत्व है।

महर्षि पतंजलि के समय में समाज में अनेक कुरीतियाँ, आड़म्बरों तथा प्रथाओं का जन्म हो चुका था। पशु बलि तथा मनुष्य बलि भी दी जाती थी। समाज इन प्रथाओं के लिए पशु हत्या व मानव हत्या करने से भी नहीं घबराते थे। स्त्रियों की दशा जहाँ वैदिक काल में बहुत अच्छी थी वह धीरे–धीरे पतन की ओर अग्रसर होने लगी थी। स्त्रियों का सम्मान समाज में थोड़ा कम होने लगा था। उन्हें पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। समाज में सभी वर्गों के व्यक्ति आपस में धर्म के नाम पर लड़ रहे थे। ऐसी स्थितियों के कारण समाज में आपसी भेदभाव, छुआ–छूत तथा अस्पृश्यता, असहयोग की भावनाओं ने जन्म ले लिया था।

महर्षि पतंजलि इन सामाजिक व्यवस्थाओं को सिरे से नकारते हुए अपने ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने योग दर्शन के द्वारा समाज

को एक ऐसी सामाजिकता की भावना का विकास किया जो अविस्मरणीय है।

सन्दर्भ

1. माहेश्वरी, विजेन्द्र किशोरः भारतीय शिक्षा दर्शन इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ, 2007.
2. लाल, रमन बिहारीः शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रस्तौगी पब्लिकेशन, मेरठ, 1990.
3. स्वामी करपात्री जी महाराजः 'मार्क्सवाद और रामराज्य', गीता प्रेस, गोरखपुर, 1928.
4. रॉस जे0 एस0ः 'ग्राउण्ड वर्क ऑफ एजूकेशनल थ्योरी, जार्ज जी0 हार्प एण्ड कम्पनी, 1949.
5. पाण्डेय, कामना प्रसादः 'नवीन शिक्षा दर्शन' अभिताश प्रकाशन मेरठ, 1991.
6. फिक्टे, जे0 सी0ः एड्रेसेज टू जर्मन नेशन; अनुवादित द्वारा जेनर, आर0 एफ0 ओपन कोर्ट पब्लिशिंग कम्पनी लंदन
7. नायक, जे0 पी0, नुरूल्ला सैयदः 'भारतीय शिक्षा का इतिहास' दि मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लि0, 1976.
8. चौबे, सरयू प्रसादः 'भारतीय शिक्षा का इतिहास', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1985.
9. सिंहल, महेश चन्द्रः 'भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्याएँ', 'राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ एकादमी, जयपुर, 1970.
10. डॉ0 शर्मा, भीष्म दत्तः 'महान शिक्षा दार्शनिक के रूप में आद्य जगद्गुरू शंकराचार्य', अनु प्रकाशन, मेरठ, 1985.
11. व्हाइट हेड, एन0 एन0ः "दा एम्स ऑफ ऐजूकेशन", मैनटर बुक्स, दा न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी, सप्तम संस्करण
12. शर्मा, आर0 ए0ः "पाठ्यक्रम विकास" ईगल बुक्स ईण्टरनेशनल, मेरठ, 1994.
13. मुखर्जी, हिमांशु भूषणः "एजूकेशन फॉर फुलनैस" एशिया पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, बम्बई, 1962.
14. मुखर्जी, आर0 ऐ0ः "डैसटिनी ऑफ सिविलाईजेशन", एशिया पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1964.
15. लीन ई0ः "व्हाज इज ऐजुकेशन", बर्नस एण्ड फैब्स वासबोर्न लिमिटेड, द्वितीय संस्करण, 1945.
16. किलपैट्रिक, डब्ल्यू0 एच0ः "ऐजुकेशन फॉर ए चेजिंग वर्ल्ड", मैकमिलन एण्ड कम्पनी इण्डिया लिमिटेड, प्रथम संस्करण 1932.
17. कबीर हुमॉयूः "इण्डियन फिलासफी ऑफ ऐजुकेशन", बाम्बे एशिया पब्लिशिंग हाऊस, 1964.
18. ड्यूबी, जॉनः "एक्सपेरिमेन्ट एण्ड एजूकेशन", मैकमिलन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, तृतीय संस्करण, 1952.

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.